श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका

શ્રી કૃષ્ણ પ્રણામી ધર્મ પત્રિકા

धनी धाम के खेलत होरी, धन धन राधे रंग ।
धन धन गोप ग्वाल व्रजवासी, खेलत प्रभुके संग ॥

फरवरी २०१०

वर्ष ८२ श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर अंक २

www.krishnapranami.org

रांची (झारखण्ड) में आयोजित ११११ श्रीमद्भागवत कथा ज्ञान यज्ञ
एवं १११ श्री तारतम सागर पारायणके विविध दृश्य

बोरसद (खेड़ा) में आयोजित श्री तारतम सागरके
३१३ पारायण महोत्सवके विविधदृश्य

श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका

संस्थापक : ब्रह्मलीन आचार्य श्री १०८ धनीदासजी महाराज

वि.सं : २०६६ निजानन्दाब्द : ४२८ बुद्धजी शाका : ३३३

वर्ष : ८२ फरवरी २०१० अंक : २

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वामित्व } जगद्गुरु आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज

मुद्रण एवं प्रकाशन स्थल } श्री ५ नवतनपुरी धाम, खीजड़ा मन्दिर जामनगर – ३६१ ००१ (गुजरात) भारत

सम्पादक : शास्त्री श्री लक्ष्मण चैतन्य *एवं* श्री कनकराय व्यास

वार्षिक शुल्क रु. १००/- | १५ वर्षीय शुल्क रु. १०००/-

पता : श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका, श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर ३६१ ००१

फोन : (०२८८) २६७ २८२९ फेक्स (०२८८) २५५ १३५३

E-mail : navtan@sancharnet.in, navtanpuri@gmail.com

website : www.krishnapranami.org/www.krishnadham.org

फागोत्सव

सुन्दरसाथजी, हिन्दू संस्कृतिका एक महत्त्वपूर्ण त्यौहार है फागोत्सव । न्युनाधिक रूपमें इसकी विशिष्टता हम सभी जानते हैं । वस्तुतः भक्तराज प्रह्लादके साथ जुड़ा हुआ यह पावन प्रसंग भक्ति प्रेरक उत्सव है । होलीका एक आसुरी शक्ति थी, अपनी दृढ़ भक्तिके द्वारा प्रह्लादने उसके ऊपर विजय प्राप्त की । 'असतोमासद्गमय' की तरह असत्यसे सत्यकी ओर अग्रसर होनेका उत्सव ही फागोत्सव है ।

बरसानेका फागोत्सव सुप्रसिद्ध है क्योंकि वहाँ पर श्रीकृष्णजीके साथ श्री राधाजी एवं गोपियाँ बड़े भावसे फाग खेला करती थी । यथार्थमें श्री कृष्ण प्रेम, श्री राधा भक्ति एवं गोपियाँ आत्मास्वरूपा हैं । इस उत्सवके माध्यमसे भक्तिके रंगमें रंगकर प्रेमस्वरूप परमात्माको प्राप्त करना ही आत्माओंका परम लक्ष्य होना चाहिए ।

बेहद वाणी

पूज्यपाद् जगद्‌गुरु आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज

हदका सामान्य अर्थ होता है सीमा। जो हदसे परे होता है उसे बेहद कहते हैं। इस प्रकार जो कालकी सीमामें आबद्ध नहीं है, विनाशशील नहीं है उसे बेहद कहा जाता है। हद और बेहदको दूसरे शब्दोंमें क्षर और अक्षर भी कहा जाता है। यहाँ पर क्षरका अर्थ है क्षरणशील अर्थात् शनैः शनैः क्षय होनेवाला, शनैः शनैः परिवर्तन होनेवाला। जो कालकी सीमामें आबद्ध होगा वह क्षयशील और क्षरणशील होगा। जो क्षरणशील नहीं होगा वह अक्षर अर्थात् अपरिवर्तनशील, अविनाशी, अखण्ड कहलाएगा। इस प्रकार क्षर अथवा हद परिवर्तनशील है और अक्षर अथवा बेहद अपरिवर्तनशील शाश्वत है। यह दृश्यमान जगत परिवर्तनशील है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही परिवर्तनशील है। ब्रह्माण्डके अन्तर्गत चौदह लोक, अष्ट आवरण, ज्योतिस्वरूप, गायत्री, शून्य, निराकार, महाशून्य आदि आ जाते हैं। इस पूरे ब्रह्माण्डको हद या क्षर कहा गया है जो निरन्तर परिवर्तनशील है और महाप्रलयमें पूर्णरूपसे नाशको प्राप्त होता है। शून्यमण्डलमें ऐसे अनन्त ब्रह्माण्ड हैं जो अक्षरब्रह्मके नेत्र भ्रमण मात्रमें उत्पन्न होते हैं, थोडे क्षण टिकते हैं और फिर लयको प्राप्त हो जाते हैं। इन सभी ब्रह्माण्डोंको क्षर अथवा हद कहा गया है। इन हद ब्रह्माण्डोंके अन्तर्गतका ज्ञान हदका ज्ञान है और ऐसे हदका ज्ञान देनेवाली वाणी हदकी वाणी होती है। इससे भिन्न परिवर्तनशील ब्रह्माण्ड़से आगे अपरिवर्तनशील अथवा अविनाशी भूमिकाका ज्ञान समझानेवाली वाणी बेहदवाणी कहलाती है।

शास्त्रोंमें दो प्रकारकी विद्याका प्रतिपादन हुआ है। उनमें एक विद्या है अपरा और दूसरी विद्या है परा। क्षर जगतकी विद्या अपरा विद्या है और क्षर जगतसे परेकी विद्या परा विद्या है। वास्तवमें क्षर जगतके ज्ञानको विद्या नहीं अपितु अविद्या कहा जाता है तथापि क्षर जगतका ज्ञान भी विशाल होनेसे उसे भी विद्या नाम देते हुए अपरा विद्या अथवा अपरा ज्ञान कहा है। उससे आगे अविनाशी भूमिकाका ज्ञान है पराविद्या अथवा परा

ज्ञान। इसी परा विद्याको महामतिने बेहदवाणी कहा है। अविनाशी भूमिका एवं अविनाशी भूमिकामें होनेवाली लीलाओंका प्रतिपादन अथवा अभिव्यक्ति करनेवाली वाणीको बेहदवाणी कहा गया है।

यथार्थतः शास्त्रोंने निर्देश दिया है, **सा विद्या यद् अक्षरमधिगम्यते**। विद्या वह है जिससे अविनाशी धाम, लीला अथवा ब्रह्मको समझा जा सकता है। नश्वर जगतमें रहते हुए अविनाशीका ज्ञान होना कठिन होता है। मायाका विस्तार भी बड़ा है। इसलिए मायाको समझानेवाली विद्या अपरा और मायासे आगेका ज्ञान देनेवाली विद्याको पराविद्या कहा है। अविनाशी भूमिका तो और भी अधिक विस्तृत है। उसका पार पाया नहीं जा सकता। इससे भी आगे पूर्णब्रह्म परमात्मा और उनके धामका ज्ञान करवानेवाली विद्याको ब्रह्मविद्या कहा गया है।

इस प्रकार अपरा विद्या, पराविद्य और ब्रह्मविद्या इन तीन प्रकारसे विद्याका उपदेश दिया गया है।

महामतिने पराविद्याको बेहदवाणी कहा है। इस जगतमें बेहदके ज्ञानका प्रचलन नहीं था। ब्रह्म ज्ञानकी बात तो दूर रही। थोड़ेसे गिने चुने लोग ब्रह्मज्ञानके विषयमें रुचि रखते थे। इसलिए शास्त्रोंमें भी ब्रह्मज्ञान संकेतमात्रमें है। पराज्ञानका भी अल्पमात्र विवरण प्राप्त होता है। महामतिने इस प्रकरणके द्वारा पराज्ञान अथवा पराविद्याका प्रतिपादन किया है और अन्तमें ब्रह्मविद्याका संकेत किया है। वह इस प्रकार है,

हद पार बेहद है, बेहद पार अक्षर ।
अक्षर पार वतन है, जागिए इन घर ।।

(प्रकाश हि. ३१/१६५)

ब्रह्मविद्यासे आत्मामें जागृति आ जाती है जिससे मायामें रहते हुए भी मायासे परे परमात्माके धाम, लीला, स्वरूप आदिका ज्ञान हो जाता है। महामतिने तारतम ज्ञानको ब्रह्मज्ञान अथवा ब्रह्मविद्या कहा है। इसके द्वारा आत्मामें जागृति आ जाती है और ब्रह्मधाम एवं पूर्णब्रह्मका ज्ञान प्राप्त होता है। अपरा, परा और ब्रह्मविद्याकी यथार्थ समझ ही तारतम ज्ञानसे प्राप्त

होती है । बेहदवाणी प्रकरणके आरंभमें प्रथम चौपाईके द्वारा महामतिने पराज्ञानके अधिकारीकी चर्चा की है । यथा,

बेहद के साथी सुनो, बोली बेहद वाणी ।
बडे बडे रे हो गए, पर काहु न जानी ॥

(प्रकाश हि. ३१/१)

नश्वर जगतका खेल देखनेके उद्देश्यसे अविनाशी धामसे आई हुई आत्माएँ ही पराज्ञान अर्थात् बेहदवाणीको समझ सकती हैं । अन्यथा जगतके खेलमें खेलनेवाले जीवोंने कितनी भी साधना क्यों न की हो उन्हें यह ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है । ऐसे उच्चकोटिके जीवोंके लिए पारका द्वार खोलदेनेका कार्य ब्रह्मात्माओंने किया है । वे जीव ब्रह्मात्माओंके सम्पर्कमें रह कर पूर्णब्रह्म परमात्माकी भक्ति करेंगे तो उन्हें भी अविनाशी धाममें अखण्ड मुक्ति प्राप्त होगी । यद्यपि वे पूर्णब्रह्म परमात्माको ब्रह्मात्माओंकी भाँति यथार्थ रूपमें नहीं पहचानेंगे तथापि उनकी भक्ति करनेपर अखण्ड मुक्ति प्राप्त कर पायेंगे । ब्रह्मात्माओंके आगमनसे उनके लिए भी अखण्ड भूमिकाके द्वार खुले हैं । इसीलिए कहा है,

मुक्ति देसी ब्रह्माण्ड को, आए ब्रह्म आतमा सत ।

बेहदवाणीके अधिकारीका उल्लेख कर इसका महत्त्व समझाते हुए भगवान विष्णु और महादेवजीका उदाहरण दिया । महादेवजीने भगवान विष्णुसे बेहदभूमिकी बात पूछी तब भगवान विष्णुने कहा, सृष्टिकी आदिसे लेकर विचार करेंगे तो ज्ञान होगा कि ऐसे करोडों ब्रह्माण्ड बनकर मिट भी गई है किन्तु आज तक किसीने भी परा विद्या बेहदवाणीका यथार्थ निरूपण नहीं किया,

ए बात तो शिवजी जाहेर, इत है कै भांत ।
ठौर ठौर कहे वचन, ए जो भेद कल्पान्त ॥

शुकजी और सनकादिक, कै और भी साध ।
तिन खोज खोज यों कह्या, ए तो अगम अगाध ॥

(प्रकाश हि. ३१/७,८)

अन्य ब्रह्माण्डोंके विषयमें उत्पन्न हुई महादेवजीकी जिज्ञासाको शान्त करते हुए भगवान विष्णुने कहा, शास्त्रोंमें अनेक ब्रह्माण्डोंकी चर्चा हुई है किन्तु कल्प भेदके कारण शास्त्रोंकी वर्णन शैलीमें उल्लेख किए गए संकेतोंका यथार्थ स्पष्टीकरण न होनेसे यह रहस्य रहस्य ही बना रहा । शुकदेवजी, सनकादि जैसे अनेक महापुरुषोंने अविनाशी भूमिका या वहाँकी लीलाके विषयमें जानने एवं समझनेका प्रयत्न किया किन्तु उन्हें भी सफलता नहीं मिली । अनेक साधकोंने खोज की तथापि यह रहस्य अगम्य रहा । लक्ष्मीजी भी भगवान विष्णुको पूछती है, आप किसका ध्यान करते हैं ? इसे जाननेके लिए उन्होंने सात कल्प पर्यन्त कठोर तपस्या की तथापि वे यह न जान सकी । भगवान विष्णुने उन्हें श्री कृष्णावतारके समय श्री कृष्ण रूक्मिणी विवाहके अवसर पर व्रजलीला श्रवण करते हुए मूर्च्छित होकर अभिनयके द्वारा समझाया कि वे श्री कृष्णजीकी व्रजलीलाका ध्यान करते हैं । नश्वर जगतमें सम्पन्न हुई व्रज एवं रास लीलाको अक्षर ब्रह्मने अपने अन्तःकरणमें अंकित कर अखण्ड किया । इस प्रकारकी लीला अखण्ड गोलोक धाममें निरन्तर होती रहती है । भगवान विष्णु उसी लीलाका ध्यान करते हैं । किन्तु वे लक्ष्मीजीको यह रहस्य नहीं समझा सके । वे ध्यानावस्थामें अखण्ड लीलाका रस आस्वादन करते थे किन्तु उसे व्यक्त नही कर पाते थे । ऐसी अखण्ड लीलाके रसका आस्वादन व्रजकी गोपियोंनें सहजतासे ही किया । यथा,

सो रस व्रज की सुन्दरी, पायो सुगम ।
सो सेहेजे घर आइयां, जो कहे वेद अगम ॥

(प्रकाशि हि. ३१/११)

व्रजकी गोपियोंने जो रस प्राप्त किया है वह तो परमधामका है । उन्होंने पूर्णब्रह्मके साथ अखण्ड लीला विहार किया जिनके लिए वेदोंने अगम, अगोचर कहा है । ऐसे पूर्णब्रह्म परमात्माकी लीला जो नश्वर जगतमें होते हुए भी अखण्ड हुई है और ब्राह्मीलीला कहलाती है उसे जाननेके लिए पराज्ञान अथवा परा विद्याकी आवश्यकता होती है । ब्रह्मात्माओंने अपने प्राकट्यके साथ साथ यह पराविद्या एवं ब्रह्मविद्याको प्रकट किया

है। यह विद्या नवतनपुरीमें प्रकट हुई है इसलिए नवतनपुरी धाम धन्य है,

नवतनपुरी भली पेरे, चित्तसों चरचानी ।
साथी जो बेहद के, तिनहुं पेहेचानी ।।

(प्रकाश हि. ३१/२०)

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराजने प्रकट होकर सर्वप्रथम बेहदका मार्ग दिखाया । श्रीमद्भागवत ग्रन्थ समस्त वैदिक वाङ्मयका परिपक्व फलकी भांति सार तत्त्व है। इसमें बेहदकी बात कही है। यह ग्रन्थ इस जगतमें ब्रह्मात्माओंके अवतरणकी साक्षी देता है। व्रज और रासकी लीला ब्रह्मात्माओंकी ही है। इन लीलाओंका वर्णन करनेवाला ग्रन्थ वास्तवमें ब्रह्मात्माओंके लिए महत्त्वपूर्ण साक्षी ग्रन्थ है। ऐसे अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें बेहदकी चर्चा की गई है। किन्तु तारतम ज्ञानका अवतरण होनेपर ऐसे ग्रन्थोंके सारे रहस्य स्पष्ट हो गए हैं। अब इस ज्ञानके द्वारा हमें अपने अन्तःकरणकी शुद्धि करनी होगी। तभी आत्मामें जागृति आएगी।

इस प्रकरणमें महामतिने बेहद लीला अर्थात् अखण्ड लीलाका रहस्य स्पष्ट किया है। नश्वर जगतमें भी पूर्णब्रह्म परमात्माने अपनी आत्माओंके साथ परमधामकी जैसी लीला की है। उन लीलाओंको व्रज, रास और जागनी लीला कहा है। व्रज और रासकी लीलाके पश्चात् ब्रह्मात्माएँ परमधाममें जागृत होती हैं किन्तु मायाका खेल देखनेकी उनकी इच्छा अभी भी पूर्ण नहीं होनेसे उन्हें पुनः कालमायाके ब्रह्माण्डमें भेजा गया। उनको कालमायाके ब्रह्माण्डमें भेजते हुए जिस मार्गसे अवतरित किया है उसे प्रतिबिम्ब लीला कहा है। यद्यपि यह लीला असली व्रज रास लीलाको समझानेके लिए वर्णित की गई एक कडी (श्रृङ्खला) है जो ब्रह्मात्माओंके नश्वर जगतमें आगमनको अखण्ड व्रज और रासलीलाके साथ जोडती है। नश्वर जगतकी आत्माओंको अखण्डलीला रसका आस्वादनका लाभ नहीं मिल सकता किन्तु वे प्रतिबिम्ब लीलारसका आस्वादन कर अखण्ड लीलाका अनुमान कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें प्रतिबिम्ब लीलाका आस्वादन करवाया। यह स्पष्टता भी महामतिने यहाँ पर की है।

नरसी मेहताने व्रजलीलाके साथ साथ रासलीलाके रसका आस्वादन करनेका प्रयत्न किया । वह यही प्रतिबिम्ब लीला है । ब्रह्मज्ञान तारतम ज्ञानके अभावमें अखण्ड लीलाका आस्वादन करना सम्भव नहीं होता । इस तथ्यको स्पष्ट करते हुए महामतिने एक और उदाहरण दिया । शुकदेवजी रास लीलाका वर्णन करने लगे थे उस समय राजा परीक्षितके प्रश्न करनेके कारण उनका ध्यान टूट गया । उन्होंने रासलीलाका थोडासा आस्वादन अवश्य किया किन्तु वे परीक्षितको यह स्वाद नहीं चखा सके । राजा परीक्षितके प्रश्नके कारण उन्हें भी इस रससे वञ्चित होना पड़ा । महामतिने इसका स्पष्टीकरण करते हुए समझाया कि विभिन्न शास्त्रोंमें इस प्रकार बेहद लीला अथवा बेहद ज्ञानका अल्प वर्णन ही हुआ है । ये सभी ग्रन्थ साक्षी ग्रन्थ हैं । स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा अथवा उनके साथ लीला करनेवाली आत्माएँ ही इन लीलाओंका स्पष्ट विवरण दे सकती हैं । अन्यथा अखण्ड लीलाके पात्र बिना उसका ज्ञान नहीं हो सकता है ।

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराजको पूर्णब्रह्म परमात्माने दर्शन देकर यह लीला देखाई और इसका आस्वादन करवाया साथ ही संसारके जीवोंको भी इसका ज्ञान करवानेके लिए तारतम्य ज्ञानका उपदेश देकर स्वयं उनके हृदयमें विराजमान हुए । इस प्रकार स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्माने ही अपनी लीलाओंका प्रतिपादन किया है । श्री देवचन्द्रजी महाराज पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री कृष्णके साथ महामति श्री प्राणनाथजीके हृदयमें विराजमान हुए और महामतिके द्वारा यह पराविद्या बेहदवाणी अवतरित हुई । शास्त्रोंमें पराविद्याका वर्णन करते हुए ब्रह्मधाम, ब्रह्मलीला और ब्रह्मके स्वरूपको समझानेवाली विद्याको पराविद्यामें भी ब्रह्मविद्या कहा है । अविनाशी ब्रह्म एवं अविनाशी धामके विषयमें भी समझना आवश्यक होता है । **'सा विद्या यदक्षरमधि गम्यते'** कहकर उपनिषदोंने अविनाशी ब्रह्म एवं अविनाशी धामका रहस्य समझानेवाली विद्याको ही यथार्थमें विद्या कहा है । नश्वर जगतका ज्ञान तो विद्या नहीं अपितु अविद्या है । नश्वर ब्रह्माण्ड़ोंको नेत्र भ्रमण मात्रमें बनाने वाला परमात्माका दूसरा स्वरूप है उसे अक्षर ब्रह्म कहते हैं । वे ब्रह्माण्डोंको बनाते हैं और मिटाते हैं । इसलिए

शास्त्रोंमें उनको कार्यब्रह्म कहा है। जिस प्रकार क्षर ब्रह्म भगवान नारायण एक होते हुए भी विभिन्न कार्योंके कारण ब्रह्मा, विष्णु, महेशके रूपमें व्यक्त होते हैं इसी प्रकार अक्षर ब्रह्मके विषयमें भी समझना चाहिए। वे तो क्षर ब्रह्मसे अति विशिष्ट हैं। वे ऐसे अनन्त क्षर पुरुषोंको प्रकट करते हैं और लीन करते हैं। उनका विस्तार भी बहुत बड़ा है। किन्तु शास्त्रोंमें उसका वर्णन नहिंवत् है। शास्त्रोंमें अक्षर ब्रह्मके विभिन्न स्वरूपोंमेंसे थोड़े स्वरूपोंका वर्णन भिन्न भिन्न रूपमें किया है। जैसे प्रणव ब्रह्म, गोलोकीनाथ आदि। मुख्यरूपसे अक्षर ब्रह्मको चतुष्पाद विभूति कहा है। उनके एक एक पादमें भी विभिन्न स्वरूप हैं। इन सभीको समष्टिरूपमें अक्षरब्रह्म कहा है। अक्षर ब्रह्म एवं उनके विभिन्न स्वरूप तथा उनके विशाल क्षेत्रका ज्ञान करवानेवाली विद्या पराविद्या है। पूर्णब्रह्म परमात्मा तो उनसे भी विशिष्ट हैं। शास्त्रोंने उनको अक्षरसे उत्तम होनेसे उत्तमपुरुष, अक्षरातीत, पूर्णब्रह्म, परम सत्य, एक, अद्वितीय आदि कह कर उनका मुख्य नाम श्री कृष्ण कहा है। मूलतः पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण हैं। वे विश्व ब्रह्माण्डके राजाओंके भी राजा एवं सबके स्वामी होनेसे श्री राज कहलाते हैं।

जिस प्रकार ब्रह्मका क्षर, अक्षर और अक्षरातीत स्वरूपका प्रतिपादन हुआ है उसी प्रकार श्रीकृष्णका भी क्षर, अक्षर और अक्षरातीत स्वरूपका प्रतिपादन हुआ है। स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्णीने प्रकट होकर श्री देवचन्द्रजी महाराजको यह रहस्य समझाया और वे स्वयं उनके हृदयमें विराजमान हुए। यह कार्य सर्वप्रथम नवतनपुरी धाममें हुआ है। इसलिए महामतिने इसके लिए कहा, यह पराज्ञान, पराविद्या, ब्रह्मविद्या श्री तारतम ज्ञान है उसका अवतरण नवतनपुरीमें हुआ है। यथा,

पेहेले बीज उदय हुआ, पुरी जहाँ नौतन ।
सब पुरियोंमें उत्तम, हुई जो धन धन ।।

(प्रकाश हि. ३१/ १०४)

इस प्रकार यह नवतनपुरी सभी पुरियोंमें उत्तम मानी गई है। महामति श्री प्राणनाथजीने नवतनपुरीका महत्त्व वारंवार समझाया है। यह श्री

कृष्ण प्रणामी धर्मकी गंगोत्री है। यहाँ पर पूर्णब्रह्म परमात्माका वास है। महामति पुनः कहते हैं,

ए मध्ये जे पुरी कहावे, नौतन जेहनुं नाम ।
उत्तम चौदे भवनमां, जिहां वालानो विश्राम ॥

इस प्रकार ब्रह्मज्ञानके अवतरणसे यह भूमि धन्य हुई है। यथा,

धन धनी पुरी नौतन, जहां लीला उदे हुई ॥

(प्रकाश हि. ३१/१३४)

महामतिने तारतम ज्ञानका महत्त्व समझाते हुए कहा, इसके द्वारा क्षर, अक्षर और अक्षरातीतका रहस्य स्पष्ट होता है। आज पर्यन्त इस जगतमें यह रहस्य स्पष्ट नहीं हुआ था। निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराजने तारतम ज्ञानके द्वारा इस रहस्यको स्पष्ट किया जिसके कारण यह ब्रह्माण्ड ही धन्य हो गया और ब्रह्मात्माओंको मायाका खेल देखते हुए भी परमधामका ब्रह्मानन्द रसके आस्वादनका लाभ प्राप्त हुआ। यथा,

धन धन धनी साथसों, धन धन तारतम ।
पूरन प्रकाश ल्याए के, सुख दिए हम ॥

तारतम रस बेहद का, सब जाहेर किया ।
बहुत विधें सुख साथ को, खेल देखते दिया ॥

(प्रकाश हि. ३१/१३५,१३६)

तारतम ज्ञान ब्रह्मज्ञान है इसलिए तारतमका रस ब्रह्मानन्द रस है। जो इसका पान करेंगे उन्हें मायाके प्रभावसे छुटकारा मिलेगा। अन्यथा मायाका जहर उनके ऊपर चढा रहेगा। महामतिने इसी तारतम ज्ञानके रसको वाणीके द्वारा पान करवाया और सुन्दरसाथको निर्विष बना दिया। यथा,

तारतम रस बानी कर, पिलाइए जाको ।
जेहेर चढ्या होय जिमीका, सुख होवे ताको ॥

जो जीव नींद छोडे नहीं, पिलाइए बानी ।
ल्याए पीउ वतनथें, बल माया जानी ॥

जेहेर उतारने साथ को, ल्याए तारतम ।
बेहद का रस श्रवनें, पिलावें हम ॥

ए रस श्रवनों जाके झरे, ताए कहा करे जेहेर ।
सुपन ना होवे जागते, देखीतां बेर ॥

(प्रकाश हि. ३१/१३७-१४०)

अक्षर और अक्षरातीत अर्थात् बेहद एवं उससे परेका ज्ञान करवानेवाला यह तारतम ज्ञान बेहदवाणीके द्वारा यहाँ समझाया है । इसके रसपानसे मायाका जहर उतरता है और आत्माको स्वयंका ज्ञान एवं अनुभव होता है । यही आत्म जागृति है । आत्मा जागृत होनेपर परमधाम एवं पूर्णब्रह्मका भी ज्ञान एवं अनुभव कर सकती है । ऐसी अनुभूतिकी महत्ता बेहदवाणीमें समझायी गई है ।

विश्वके विभिन्न धर्मग्रन्थोंमें आत्मा, परमात्मा एवं परमात्माके धामका उल्लेख किया है । किन्तु प्रतिपादन शैलीके अन्तरके कारण उनकी एकरूपता नहीं है । ऐसे सभी ग्रन्थोंका तारतम्य समझना अति आवश्यक होता है । इन सभी शास्त्रोंका लक्ष्य एक ही है किन्तु देश, काल और परिस्थितिके अनुसार प्रतिपादन शैलीमें विविधता आई है । इन विविधताओंको दूर कर इनके एकत्त्व भावका प्रतिपादन ही इनका तारतम्य है । इसीको तारतम्य ज्ञान कहा है । निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजीं महाराज एवं महामति श्री प्राणनाथजीने एकत्त्वका प्रतिपादन किया है । स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्माने दर्शन एवं उपदेश प्रदान कर सर्वप्रथम एकत्त्वका बोध करवाया । पूर्णब्रह्म परमात्मा द्वारा करवाया गया यह बोध निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज एवं महामति श्री प्राणनाथजीके द्वारा इस जगतको मिला है । इसलिए सामान्य जन समझते हैं कि तारतम्य ज्ञान तो श्री कृष्ण प्रणामी सम्प्रदायका ज्ञान है । वास्तवमें तारतम्य ज्ञान पूर्णब्रह्म परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान है उसे प्रकट कर प्रचारित करनेका श्रेय श्री कृष्ण प्रणामी सम्प्रदायको प्राप्त है । यह ज्ञान पूरे विश्वको अखण्ड सुख प्रदान करनेके लिए प्रकट हुआ है ।

हिन्दू धर्मके सनातन सिद्धान्त

'एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति'

ब्रह्मलीन आचार्य १०८ धर्मदासजी महाराज, श्री ५ नवतनपुरी धाम

'एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति' इस वैदिक सनातन सिद्धान्तकी सत्यताकी अनुभूति करनेके पश्चात् महामति श्री प्राणनाथजीने कहा,

'पार ब्रह्म तो पूरन एक है'
'पार पुरुष तो पिया एक है'
जुदे जुदे नामें गावहीं, जुदे जुदे भेष अनेक ।
जिन कोई झगडो आप में, धनी सबों का एक ।।

विद्वानोंने परम सत्य परमात्माको पृथक् पृथक् नामोंसे सम्बोधित किया है किन्तु 'सबका मालिक एक' के अनुरूप वस्तुतः परमात्मा एक ही है । इसके लिए किए जा रहे विवाद निरर्थक हैं ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म(निजानन्द सम्प्रदाय)का एक ही लक्ष्य है परा प्रेम लक्षणा भक्तिके द्वारा पूर्ण ब्रह्म परमात्माको प्राप्त करना ।श्री मद्भागवत महापुराणमें वर्णित गोपी भाव (अनन्य परा प्रेम लक्षणा भक्ति) के द्वारा अनादि अक्षरातीत पूर्णब्रह्म परमात्माका ज्ञान प्राप्त करना, उनकी खोज करना एवं उनके साथ एकत्त्व प्राप्त करना ही श्री कृष्ण प्रणामी धर्मका मूल सिद्धान्त है । श्री मद्भागवतमें कहा है,

गोपी भावेन देवेश, स मामेति न चेतरः ।

श्री कृष्णजी उद्धवजीको उपदेश करते हुए कहते हैं, जो गोपी भावकी अनन्य प्रेम रूपा भक्ति द्वारा पतिव्रता भावसे हमारी उपासना करते हैं उन्हींको हमारी प्राप्ति होती है । अन्य किसी भी साधनसे मेरी प्राप्ति सहज नहीं है । इस गोपी भाव अथवा परा प्रेम लक्षणा भक्तिकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन करते हुए महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं,

यामें प्रेम लक्षणा एक पार ब्रह्मसों, एक गोपियों ए रस पाया ।
तब भव सागर भया गौपदवच्छ, विहंगम पैडा बताया ।।

गीताका परम गोपनीय रहस्य 'पुरुषोत्तम तत्त्व' है, श्री कृष्णजी कहते हैं,

क्षर सर्वाणि भूतानि, कुटस्थोऽक्षर उच्यते ।
उत्तम पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।।

नाशवान जड़्वर्ग, क्षर प्रकृति, चौदह लोक, अष्टावरण, सात शून्य, महाविष्णु आदिसे सर्वथा अतीत और अविनाशी अक्षरब्रह्मसे भी परे जो हैं वही एक परमात्मा हैं जिनको परमब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्ण कहते हैं । महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं,

क्षरथी तीत अक्षर थया, अने अक्षरातीत कहेवाए ।।
हद पार वेहद है, वेहद पार अक्षर ।
अक्षर पार वतन है, जागिए इन घर ।।

हमारे वैदिक शास्त्रोंमें भारत वर्षको जगतका प्राण कहा है । सारा विश्व एक शरीर है तो भारत उसकी आत्मा है । ऐसे परम पावन भूमिमें परमात्माने हमें जन्म दिया है । कहते हैं 'चार पदारथ पायो अमोलक' इन अमूल्य चारों पदार्थोंमें एक पदार्थ है भारत वर्षमें जन्म होना । जिस भूमिमें जन्म प्राप्त करनेके लिए देवतायें भी लालायित रहते हैं यह ऐसी पतित पावनी भूमि है । श्री मद्भागवतमें इसके लिए कहा है,

गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ये भारत भूमि भागे ।
स्वर्गापवर्गस्य च हेतुभूताः भवन्ति भूयः पुरुषः सुरत्वात् ।।

स्वर्गके देवता भी यह गीत गाते हैं जो स्वर्ग और अपवर्गको देने वाली भारत भूमि धन्य है । तो ऐसी परम श्रेष्ठ भूमिमें सनातन हिन्दू धर्मके संस्कारोंसे संस्कारित होकर हमारा जन्म हुआ तो हमें इसका महत्त्व समझते हुए उन पर ब्रह्म परमात्माको जाननेका प्रयत्न करना चाहिए । महामति यह भूमि एवं हिन्दू धर्मके प्रति गौरव अनुभव करते हुए कहते हैं,

भौम भली भरत खण्डकी, जहाँ आई निध नेहेचल ॥

त्रिलोकीमें उत्तम खण्ड भरतको, तामें उत्तम हिन्दू धर्म ॥

हिन्दू धर्मके प्रति विश्व विख्यात रोम्या रोलाने लिखा है : *''मैंने युरोप और एशियाके सभी धर्मोंका अध्ययन किया है, परन्तु मुझे उन सबमें हिन्दू धर्म ही सर्वश्रेष्ठ अनुभव हुआ। मेरा विश्वास है इस हिन्दू धर्मके सामने एक दिन समस्त जगतको सिर झुकाना पड़ेगा।''*

ऐसी उत्तम भूमि, उत्तम धर्म, सर्व समर्थ सद्गुरु एवं परमोत्तम ज्ञानको प्राप्त कर हम धन्य भागी हुए हैं। ऐसा उत्तम अवसर हमें प्राप्त हुआ है। उपरोक्त वैदिक सूक्ति 'एकं सद्' एवं महामतिके '**पार ब्रह्म तो पूरण एक है**' को समझें और समझायें। यही हमारा परम कर्तव्य है।

सावधान

आलसीका यश, दुष्टोंकी मित्रता, नपुंसकका कुल, व्यसनीकी विद्या, विलासीकी सम्पत्ति, कृपणका सुख, असत्यवादी बुद्धि, अनभ्यासीकी स्मरण शक्ति तथा अविवेकीका सबकुछ विनष्ट हो जाता है।

इसीतरह नदी किनारे उगनेवाले वृक्ष, खेतमें फसलके साथ आनेवाले पौधे व घास, कुसंगमें रहने वाले पुरुष, दूसरेके घरमें अधिक जानेवाली स्त्री, अनुशासनहीन एवं अवज्ञाकारी सन्तान, अपव्ययी और विलासी व्यापारी, रिश्वतखोरी अधिकारी और गुप्तचर व्यवस्थाहीन राज्य देरसबेर अवश्यमेव नष्ट हो जाते हैं।

- नीति

वीतक-यात्रा

शास्त्री श्री लक्ष्मण चैतन्य, श्री ५ नवतनपुरी धाम-जामनगर

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म (निजानन्द सम्प्रदाय) का अत्यन्त लोकप्रिय एवं सर्वग्राह्य सत्साहित्य है 'वीतक' । वीतक शब्द श्रवण करते ही प्रणामी धर्ममें दीक्षित सुन्दरसाथका मानसपटल श्रद्धा, भक्ति एवं भावसे ओतप्रोत हो जाता है । वीतक शब्दोच्चारण होते ही धर्मप्रेमी एवं सुज्ञ सुन्दरसाथके हृदय पटलपर वीतक साहित्यमें वर्णित विविध प्रसंग-जैसे परमात्माका धाम, लीला एवं स्वरूपके साथ-साथ व्रजलीला, रासलीला, निजानन्दाचार्य सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी, महामति श्री प्राणनाथजी तथा उनके समयकालीन महान आत्माओंकी जीवनी मूर्तिमन्त बन जाती है । उस समय वीतक शब्द मात्र शब्द न रहकर उसके अन्दर निहीत गूढातिगूढ रहश्यका दिग्दर्शन हो जाता है एवं शब्दान्तर्गत परिव्याप्त भाव सजीव हो उठता है ।

सभीको इस परम रहस्यात्मक ज्ञानके विषयमें जानकारी नहीं होती है । कितने सुन्दरसाथ धर्ममें दीक्षित होनेपर भी धर्मके गूढ ज्ञानसे कोशों दूर होते हैं । हमारे अन्दर धर्मके प्रति श्रद्धा एवं आस्था तब जागृत होगी जब हम धर्मके इतिहासको जानेंगे एवं समझेंगे । श्री कृष्ण प्रणामी धर्मको समझनेके लिए न्यूनाधिक रूपमें वीतकका ज्ञान होना अत्यावश्यक है । अतः आईए 'वीतक' क्या है ? इसके विषयमें विहंगावलोकन करते हैं, क्यों ? इससे क्या लाभ होगा ? तो देखिए स्वयं महामति स्वामी श्री प्राणनाथजी क्या कहते हैं,

सुनियो वानी सुहागनी, हुती जो अगम अकथ ।
सो वीतक कहूँ तुम को, उड जासी सब भरम ॥

-श्री तारतम सागर

अर्थात् हे सुहागिनी आत्माओ ! इन दिव्य वचनोंको सुनो, जो अभी तक अकथ (अवर्णनीय) तथा अगम (अगम्य-मनकी शक्तिसे परे)

कहे गए हैं । मैं तुम्हें वह वृत्तान्त (वीतक) सुनाऊँ जिसे सुनने पर सभी भ्रान्तियाँ मिट जाएँगी । और क्या लाभ होगा देखें श्री लालदासजीके शब्दोंमें,

विरोध सारा विश्व का, भागत इन वीतक ।
सब को पहिचान होवहीं, पहुँचे कदमों हक ॥

-स्वामी लालदासजी

अर्थात् वीतक ज्ञान मानव मनमें पल्लवित द्वन्द्वता एवं वैमनस्यताको मिटाकर उनके हृदयगुहामें परिव्याप्त अज्ञानान्धकारसे विमुक्त कर जन जनके प्रति प्रेम, सद्भाव तथा सहिष्णुतादि सद्गुणोंका बीजारोपण करनेका सामर्थ्य रखता है । इतना ही नहीं, वह आत्म पहिचान कराकर परब्रह्म परमात्माके पावन चरणोंमें स्थान प्रदान करता है। ऐसे ब्रह्मतत्त्वकी अनुभूति करानेमें समर्थ परमज्ञानके विषयमें उपनिषदमें कहा है,

भिद्यते हृदय ग्रन्थि छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ॥

-मुंडकोपनिषद्

अर्थात् जब मनुष्यको उस परम ज्ञान आत्म ज्ञान एवं परमात्मा विषयक ज्ञान प्राप्त हो जाता है तब उसकी अन्तःकरणकी गाँठ खुल जाती है । मतलव इस ज्ञान रश्मिके उदय होते ही उसके हृदयान्धकार नाश हो जाता है । इस ज्ञानके द्वारा जब उसके अन्दरके समस्त संशयोंका छेदन हो जाता है । तब ही मनुष्य परम शांतिका अनुभव करेगा ।

वीतक :

वस्तुतः वीतक शब्द हिन्दी शब्दकोशमें नहीं मिलता है । किन्तु गुजराती भाषामें वृत्त-वृत्तान्तके अर्थमें वीतक शब्दका प्रयोग किया जाता है । वीतक संभवतः वीत-कहानीसे अपभ्रंश होते होते वीतक बन गया हो । वस्तुतः वीतकका अर्थ है आपा वीती, घटित घटनायें, इतिहास एवं जीवनी । किसकी ? ब्रह्मात्माओंकी ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें वीतक साहित्यकी सुदीर्घ परम्परा रही है। जिनमें स्वामी श्री लालदास वीतक, श्री वृत्तान्तमुक्तावली वीतक, श्री मिहिराज चरित्र वीतक, श्री लीलारस सागर वीतक, श्री तारतम सागर वीतक, श्री नवरंग स्वामी कृत वीतक तथा श्री वर्तमान दीपक वीतक प्रमुख हैं। इन सभी वीतकोंमें स्वामी श्री लालदास कृत वीतकका स्थान सर्वोपरि है। क्योंकि वीतकके इतिहासमें लालदास कृत वीतक अधिक प्रामाणित है। स्वामी श्री प्राणनाथजीकी परम कृपा एवं आज्ञा द्वारा ही रचनाकारने वि.सं १७५१ श्रावण वदी पञ्चमीसे आरंभ कर भाद्र कृष्णाष्टमीके पावन दिनमें इसकी संरचना पूर्ण की थी। अतः प्रत्येक वर्ष श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिरोंमें रचनाकालके एक महीना पर्यन्त इसकी कथा करनेकी परम्परा है।

उपरोक्त सभी वीतक प्रणामी समाजमें पूजनीय एवं वंदनीय हैं। सभी वीतककी भाषा शैली एवं प्रस्तुतिमें भिन्नता जरुर है किन्तु सभीका विषयवस्तु एवं लक्ष्य एक ही रहा है और वह है परमधाम, व्रज, रास एवं जागनीका रहस्योद्‍घाटन। हाँ, यह बात जरूर है कि किसी वीतककारने किसी एक विषय पर अधिक जोर दिया है तो किसीने किसी दूसरे विषय पर। परन्तु सभी वीतकोंमें न्युनाधिक रूपसे समग्र विषयका प्रतिपादन जरूर हुआ है। तो आईए, वीतक ग्रन्थ एवं महामतिकी पावन वाणी श्री तारतम सागरके माध्यमसे उपरोक्त सभी विषयोंका आद्योपान्त आंशिक आचमन कर जीवन सुमनको सुरभित करें।

सुन्दरसाथजी, यथार्थमें वीतकका वर्णन तो महामति स्वामी श्री प्राणनाथजीने श्री तारतम सागर ग्रन्थमें प्रगटवाणीके माध्यमसे पूर्व ही किया है। उन्होंने वीतकको समझाते हुए कहा,

अब सुनियो मूल वचन प्रकार, जब नहीं उपज्यो मोह अहंकार।
नाहीं निराकार नाहीं सुन, ना निरगुन ना निरंजन ॥
ना ईश्वर ना मूल प्रकृति, ता दिन की कहूँ आपाबीती।

अर्थात् महामति कहते हैं, अब सृष्टि रचनासे पूर्वकी मुख्य लीलाको ध्यान पूर्वक सुनो, जब मोह और अहंकारकी उत्पत्ति नहीं हुई थी और

शून्य, निराकार, निर्गुण तथा निरंजनकी भी उत्पत्ति नहीं हुई थी। न ईश्वर ही थे न ही मूल प्रकृति उत्पन्न हुई थी। उस समय हम ब्रह्मात्माओंके साथ क्या घटना घटित हुई उसकी आपाबीती मैं सविस्तार वर्णन करता हूँ।

सुन्दरसाथजी ! अब ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस दृश्यमान जगतको शास्त्रमें मृत्युलोक (भूःलोक) कहा है । शास्त्रके अनुरूप मृत्युलोकके नीचे इसी प्रकारके सात लोक हैं जिन्हें सात पाताल (अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल एवं पाताल) कहते हैं तथा इस मध्यभाग मृत्युलोकसे ऊपर छः स्वर्ग (भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक एवं सत्यलोक) हैं ।

मृत्युलोकको कर्मभूमि कहा है यहाँ पर जीव जैसा कर्म करता है उसको उसी प्रकारके लोक प्राप्त होते हैं । यदि मृत्यलोकमें मनुष्य शुभ कर्म, उदात्त भावना और शुद्ध विचारसे ओतप्रोत होते हुए जीवन यापन करता है तो उसे मृत्युलोकके ऊपर जिसे उत्तम (उच्च) लोक कहते हैं प्राप्त होता है। यदि यहाँ पर जो अशुभ कर्म, अशुभभावना और निकृष्ट विचारपूर्ण जीवन यापन करता है उसे शास्त्रानुरूप निम्न (अधम) लोक प्राप्त होता है । पुण्य और पापका क्षय होनेपर जीव पुनः मृत्यलोकमें जन्म धारण कर लेता है। जिससे जीवको पुनः शुभाशुभ कर्म करनेका अवसर प्राप्त होता है ।

इस प्रकार विराट पुरुषके विश्वरूपमें १४ लोक विद्यमान हैं । चौदह लोकोंमें सबसे ऊपर सत्यलोक है। इस लोकके मध्यभागमें भगवान विष्णुका वैकुण्ठ धाम, दायीं ओर भगवान शंकरका कैलाश धाम एवं बायीं ओर भगवान ब्रह्माजीका ब्रह्मापुरी शोभायमान हैं। उपरोक्त चौदह लोक (पातालसे सत्यलोक पर्यन्त) अष्टावरण (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि एवं अहंकार) से आबद्ध हैं। यथा,

भूमि रापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ।।

आठों आवरणोंसे आबद्ध पूर्वोक्त ब्रह्माण्डके ऊपर व्यष्टि प्रणवका स्थान है जिसे ज्योति स्वरूप कहा गया है। ज्योति स्वरूपसे भी ऊपर ज्ञान

शक्ति गायत्रीका स्थान है । गायत्रीसे ऊपर महतत्त्व है । इससे परे शून्य निराकार है । इससे परे आदिनारायण विराजमान हैं जिन्हें महाविष्णु भी कहते हैं । यहाँ तक क्षर ब्रह्माण्ड कहा है । क्षय एवं विनाशशील होनेसे ही इसको क्षर कहा है ।

महामति श्री प्राणनाथजीने चौपाईमें कहा कि जब मोह और अहंकारकी उत्पत्ति नहीं हुई थी और शून्य, निराकार, निर्गुण तथा निरंजनकी भी उत्पत्ति नहीं हुई थी । न ईश्वर ही थे न ही मूल प्रकृति उत्पन्न हुई थी । उस समयकी बात मैं कहता हूँ । जब कुछ भी नहीं था तो था क्या ? जो महामति सुनाने जा रहें हैं, तो सुनें ध्यानसे । जब उपरोक्त क्षर ब्रह्मांडका कोई अस्तित्त्व नहीं था तब भी एक परम सत्य अविनाशी अक्षर ब्रह्मका परम अस्तित्त्व था ।

अक्षर ब्रह्म इन समस्त सृष्टिके कारण स्वरूप हैं । जिनके नेत्रभ्रमण मात्रसे ऐसे एक दो नहीं किन्तु करोंड़ों करोड़ ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं एवं लयको प्राप्त हो जाते हैं । ऐसे करोड़ो ब्रह्माण्डोंको बनाना एवं मिटाना अक्षर ब्रह्मकी बालसुलभ क्रीडा मात्र है । जिसप्रकार छोटे छोटे बच्चोंकी क्रीडा बडी विचित्र होती है । बच्चे क्रीड़ा करते हुए बड़ी लगनसे बड़े भावपूर्वक मिट्टी व रेतीसे मकान दुकानादि बनाया करते हैं किन्तु जब उसकी मा उसे दुध पिलाने व भोजन करानेके लिए बुलाती है तो उस मकान दुकानको यूं ही बेरबिखेर कर मांके पास चल देते हैं । यही बच्चोंकी बालसुलभ क्रीडा है । इसी प्रकार अक्षर ब्रह्मके लिए भी ब्रह्मांडोंकी उत्पत्ति एवं लय ऐसे ही बाल सुलभ क्रीडा मात्र है । उपरोक्त दो पुरुष क्षर एवं अक्षर पुरुषके विषयमें श्री कृष्णजी कहते हैं,

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षर सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ।।

अर्थात् इस लोकमें क्षर (नश्वर) और अक्षर (अविनाशी) ये दो पुरुष प्रसिद्ध हैं । समस्त भूत क्षर (परिवर्तनशील) है । और अक्षर पुरुष सदा नित्य एवं अखण्ड है । जिसे कूटस्थ भी कहते हैं । महाभारतमें कहा है,

अक्षरं ध्रुवमेवोक्तं पूर्णं ब्रह्म सनातनम् ।
कूटस्थं चैव नित्यं च यद् वदन्ति पुराविदः ॥

अर्थात् अक्षर अविनाशी तत्त्वको ही कहा गया है, जो पूर्ण एवं सनातन है उसीको तत्त्वज्ञ महापुरुष कूटस्थ एवं नित्य पुरुष कहते हैं। जिनके अंगस्वरूप होनेसे अक्षरको भी अखण्ड एवं नित्य माना गया है। ऐसे सर्व समर्थ नित्य अविनाशी अक्षरब्रह्म भी जिनकी आज्ञाका पालन करते हैं, जिनके नित्य प्रति दर्शनार्थ उनके धाममें जाते हैं उन्हें अक्षरातीत ब्रह्म (उत्तम पुरुष) कहते हैं,

उत्तम पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः । - गीता १५

अर्थात् समस्त कारणोंके भी कारण, सच्चिदानन्द स्वरूप परब्रह्म परमात्मा, पूर्णपुरुषोत्तम इन दो (क्षर एवं अक्षर) पुरुषसे सर्वथा भिन्न तथा सर्वगुण सम्पन्न नित्य शुद्धमुक्त स्वभावका है। जो समस्त चेतनाओंका केन्द्रविन्दु है। इस बातकी पुष्टि करते हुए महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं,

सात लोक तले जीमी के, मृत्यु लोक है तिन पर ।
इन्द्र ब्रह्मा रुद्र बीच में, ऊपर विस्नु वैकुण्ठ घर ॥

निराकार वैकुण्ठ पर, तिन पर अक्षर ब्रह्म ।
अक्षरातीत ब्रह्म तिन पर, यों कहे ईसे का इलम ॥

अर्थात् सद्गुरुका तारतम्य ज्ञान सुस्पष्ट करता है कि जो क्षर (चौदह लोक ब्रह्मांड, अष्टावरण, ज्योतिस्वरूप, गायत्री शक्ति, शून्य, निराकार एवं आदिनारायण पर्यन्त) तथा अक्षरसे भी परे हैं वही पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्ण हैं। महामति श्री प्राणनाथजीने पूर्वोल्लेखित '**अब सुनियो मूल वचन प्रकार........ता दिनकी कहूँ आपाबीती**' चौपाई द्वारा उपरोक्त पूर्णब्रह्म परमात्माके साथ ब्रह्मात्माओंकी घटित हुई घटना एवं विगत कहनेकी बात कही है।

सुन्दरसाथजी, वीतक यात्राका यह प्रथम पड़ाव है, शेष आगामी अंकमें........॥ प्रणाम ॥

पंच सूक्ति

‘उत्तिष्ठित जाग्रत प्राप्यवरान्निबोधत’

उठो, जागो एवं श्रेष्ठ ज्ञानको प्राप्त करो ।

–ऋगवेद

यस्तु सर्वाणि भूतनिआत्मन्येवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥

जो सभी प्राणियोंको आत्मामे देखता है और सभी प्राणियोंमें आत्माके दर्शन करता है, वह इस सम्यक् दृष्टिके कारण किसीसे भी घृणा नहीं करता है ।

–ईशावास्योपनिषद

इदं हि पुंसतपसः श्रुतस्य वा स्विष्टस्य सूक्तस्य च बुद्धिदत्तयोः ।
अविज्युतोऽर्थः कविभिर्निरूपितो यदुत्तमश्लोकगुणानुवर्णनम् ॥

प्रबुद्धजनोंने मनुष्यकी तपस्या, वेदाध्ययन, यज्ञानुष्ठान, स्वाध्याय, ज्ञान तथा दानादिका एक मात्र यही अविनाशी फल बताया है कि परब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णके गुणों एवं लीलाओंका गान किया जाय ।

–श्रीमद्भागवत महापुराण

श्रद्धावांल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

ज्ञान प्राप्त करनेके लिए श्रद्धावान् होना आवश्यक है और उसके साथ इन्द्रिय संयम भी । ज्ञान प्राप्त होने पर शीघ्र ही शांतिकी प्राप्ति होती है ।

–श्रीमद्भगवद्गीता

पहेले आप पहेचानो रे साधो, पेहेले आप पेहेचानो ।
बिना आप चीन्हें पार ब्रह्मको, कौन कहे मैं जानो ॥

हे सज्जनो, साधको ! सर्व प्रथम तुम स्वयं आत्माको पहचानो, क्योकि स्वयंको पहचाने बिना परब्रह्म परमात्माको पहचाना नहीं जा सकता है ।

–श्री तारतम सागर

मनोनिग्रह

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।

मन प्राणियोंके हृदयमें निवास करनेवाली एक ऐसी चञ्चल शक्ति है, जो प्राणियोंको अपनी श्रृङ्खलामें बाँधकर उन्हें मनमाने मार्गपर ले जाती है। इस शक्तिका दमन करना सरल काम नहीं है। बड़े-बड़े तपस्वी, महात्मा भी इस शक्तिको दमन करनेके लिये अनेकों प्रकारके उपाय करते रहे पर इसे वशमें न ला सके। वास्तवमें यदि मनुष्य इस शक्तिपर विजय प्राप्त कर लेता है तो उसके लिये यह जीवन मार्ग अत्यन्त सरल तथा सुखकर हो जाता है। श्री मद्भगवद्गीतामें भगवान् श्री कृष्णसे अर्जुनने जब यह पूछा,

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥

अर्थात् हे भगवन् ! यह मन अत्यन्त चञ्चल एवं हृदयमें उद्वेग उत्पन्न करनेवाला तथा दृढ़ और बलवान् है, इसका दमन करना वायुके वेगको रोकनेके समान है अतः मैं इसे किस प्रकार वशमें करूँ ? उस समय श्री कृष्णजीने अर्जुनको इस मनोनिग्रहके लिये अभ्यास एवं वैराग्य ही प्रधान उपाय बताया। परन्तु, इन उपायोंका अवलम्बन करनेसे पहले मनुष्यको अपनी इन्द्रियोंको वशमें करना चाहिये, तभी मनुष्य अभ्यास और वैराग्यके द्वारा मनको वशमें कर सकता है। उपनिषद्में मनको वशमें करनेका उपाय एक बड़े अच्छे रूपकके द्वारा सरल भावसे समझाया गया है,

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु ।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ॥

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान् ।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः ॥

शरीर रथ है। आत्मा रथी है। बुद्धि सारथि है। मन लगाम है और इन्द्रियाँ घोड़े हैं। यह रथ विषयोंके मार्गपर चला जा रहा है। जिस प्रकार रथके घोड़े वशमें न होनेपर रथको ऊबड़-खाबड़ मार्गमें ले जाकर पटक देते

हैं, ठीक उसी प्रकार यदि इन इन्द्रियरूपी घोड़ोंको वशमें न किया जायगा तो ये न जाने इस आत्माको अपनी इच्छानुसार किस पतनके गर्तमें डाल दें । अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य मनरूपी लगामके साथ इन्द्रियरूपी अश्वोंको विवेकके द्वारा वशमें करे, और उन्हें ठीक मार्गपर चलने योग्य बनाये ।

मनुष्यका मन इतना चञ्चल है कि वह प्रत्येक क्षण, यहाँतक कि सुषुप्ति-अवस्थामें भी, कार्य करता ही रहता है । यदि इस मनके आगे हमारे कल्पनारूपी पदार्थ अच्छे रूपमें उपस्थित होंगें तो यह अच्छी कल्पनायें करेगा, कल्पनायें ही दूषित होंगी तो मनकी चेष्टायें भी दूषित होंगी । इसलिये मनके सामने अच्छे अच्छे कल्पनारूपी खाद्य उपस्थित करना मनुष्यका कर्तव्य है । इसके लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य कुछ विवेकसे काम ले और सद्ग्रन्थों एवं सत्पुरुषोंका सत्सङ्ग करे ।

जो मनुष्य मनको वशमें करनेका अभ्यास करता है, उसकी चेष्टाएँ बड़ी विचित्र हो जाती हैं । मान लीजिये चक्षुरिन्द्रियके वशीभूत होकर उसके मनने कभी यह चाहा कि अपने नगरमें आये हुए सिनेमाको देखने चलो, मनकी प्रेरणासे वह सिनेमाघर चला भी गया, फर्स्ट क्लासका टिकट भी खरीद लिया, किन्तु यदि वह मनको रोकनेके लिये सिनेमाद्वारमें प्रवेश करते समय उसका विवेक जाग्रत होकर उसे सचेत कर देगा और उसे कहेगा, अरे आज तू इस चक्षुरिन्द्रिय और मनके वशमें होकर कहाँ चला जा रहा है ? आज यह मन सिनेमा देखना चाहता है, कल न जाने क्या दुर्लभ वस्तु माँग बैठे ? कहाँतक इसकी इच्छाओंको पूर्ण करता रहेगा ? यह विचार आते ही वह सिनेमाघरसे उसी समय लौट कर आयेगा । इस प्रकार अपने मानसिक वृत्तियोंको रोकनेवाला मनुष्य ही अभ्यास परिपक्व हो जानेपर 'वशी' कहलाता है ।

अतः यह सिद्ध हो गया कि मन महाराजको वशमें करनेके लिये सबसे पहले इन्द्रियदमन करना होगा । उसके पश्चात् हमें मनको स्थिर एवं शान्त करनेके लिये अभ्यास और वैराग्यकी आवश्यकता होगी । भगवान श्री

कृष्णने अर्जुनको इस चञ्चल मनको वशमें करनेके लिये इन्द्रियदमन, अभ्यास और वैराग्य यही उपाय बताये हैं। किन्तु इन्द्रियदमनके लिये मनुष्यको विवेकका आश्रय लेना होगा, बिना विवेकके वह इन्द्रियोंको दमन करनेमें समर्थ न हो सकेगा।

यदि मनुष्यने मनको वशमें कर लिया तो मानो उसने अपने जीवनकी सबसे कठिन समस्या हल कर ली, सबसे बड़ी गुत्थी सुलझा ली, क्योंकि मनके वशीभूत हो जानेपर मनुष्य उसे किसी भी साधनमें लगा सकता है। भक्ति, ज्ञान, योग सभी साधनोंमें मनोनिग्रहकी आवश्यकता होती है। मनको निगृहीत करनेका अर्थ है उसे विवेक द्वारा बाँध लेना। मनको हम जहाँ ले जाना चाहें वहीं जाय और जहाँसे हटाना चाहें तुरंत हट जाय यही उसके निगृहीत होनेकी पहचान है। मनके निग्रहीत हो जानेपर मनुष्यके द्वारा कोई भी कार्य ऐसा नहीं होता, जिससे उसके हृदयमें किसी प्रकारका उद्वेग पैदा हो। तभी मनुष्य इस अशान्तिपूर्ण संसारमें रहते हुए भी शान्तिका अनुभव कर सकता है। यदि मनुष्यके हृदयमें शान्ति है तो वह एक प्रकारसे मुक्तिके द्वारपर खड़ा है। अतः यह सिद्ध हो गया कि संसार-बन्धनमें पड़ने एवं उससे छुटकारा पानेमें यह मन ही सबसे प्रधान कारण है और मनको वशमें करना ही संसार-बन्धनसे छुटकारा पानेका प्रधान साधन है।

चार बन्दर

(एक प्रतीकात्मक आलेख)

भारतीय प्राचीन ऋषि मनीषियोंने विश्वको जो अनमोल सम्पदा दी है वह महान विचारोंका एवं महान सोचका परिणाम है। इसी महान सम्पदा प्रदायकी जन्म भूमि होनेके कारण है भारतको विश्वका धर्मगुरु माना जाता है।

मनुष्यका अस्तित्त्व ही उसकी सोच एवं विचारके कारण है। मानवीय मस्तिष्क विश्वका बेहतरीन टापू है। इस डेढ़ किलोके टापूमें

दुनियाँका श्रेष्ठतम खजाना भरा पड़ा है । अगर हम अपने मस्तिष्कको विकसित करें, सोचने समझनेकी क्षमताको बेहतर बनायें तो अनेकानेक जटिलसे जटिल कार्य भी कुशलतापूर्वक एवं सहजतापूर्वक किए जा सकते हैं । युद्ध करके जीतने वाले लोगोंके स्टेच्यु बनाकर चौराहें पर खड़ा कर दिया जाता है । किन्तु दुनियाको महान विचार देनेवाले लोग मंदिरमें आसीन होकर पूजनीय हो जाते हैं । फिर हम उनकी पूजा करने लगते हैं । इसलिए प्रत्येक व्यक्तिको अपने भीतर जो खजाना गड़ा है उस पर ध्यान देना चाहिए । हम लोग अपने चेहेरे पर, रिश्तों पर एवं व्यापार पर तो ध्यान देते हैं परन्तु अपनी सोचको नजरअंदाज कर देते हैं ।

हमारी विचारधारायें और सोच ही जीवनका मूल आधार है । व्यक्ति जैसा सोचेगा, वैसा ही नजरिया रखेगा । जैसा नजरिया होगा वैसा ही हम शब्दोंका उपयोग करेंगे । जैसे शब्द बोलेंगे वैसा ही हमारा व्यवहार होगा । जैसा व्यवहार होगा, वैसी ही आदतें बनेंगी । जैसी हमारी आदतें होंगी वैसा ही हमारा चरित्र होगा । अगर हमें अपना चरित्र बनाना है तो हमें अपनी आदतें सुधारनी होगी । आदतोंको सुधारनेके लिए व्यवहार बेहतर बनाना होगा । बेहतर व्यवहारके लिए अपनी वाणी और शब्दोंको बेहतर बनाना होगा । शब्दोंको बेहतर बनानेके लिए नजरिएको बेहतर बनानेकी जरुरत है । नजरिएको बेहतर बनानेके लिए सोचको बेहतर बनाना होगा । मतलब कुल मिलाकर बेहतर सोच ही उत्कृष्ट जीवनका मूल आधार है । अच्छी सोच-अच्छा जीवन । बुरी सोच-बुरा जीवन ।

गाँधीजीने तीन बंदरोंके माध्यमसे कहा था-बुरा मत देखो, बुरा मत बोलो और बुरा मत सुनो । इसके आगे यदि एक कड़ी और जोड़ दी जाए तो और बेहत्तर होगा । वह है **बुरा मत सोचो ।** अगर सोच बुरी नहीं है तो आदमी न तो बुरा देखेगा, न बुरा बोलेगा न ही बुरा सुनेगा । बुरी सोच ही आँख, कान एवं जिह्वाको बुरा बनाती है । जो कभी अपने मन एवं इन्द्रियोंके द्वारा बुरा नहीं करता निश्चित ही धरतीका देवता वही है ।

देव और दानवमें यही तो अन्तर है जिसकी सोच अच्छी है वह देवता और जिनकी सोच बुरी हो वह दानव । हमें क्या बनना है देव या दानव यह अपने हाथमें है ।

हमारे धर्मशास्त्रोंमें देवता एवं दानवोंकी अनेक कहानियाँ आती हैं । वास्तविकता तो यह है कि देव व दानव हमारे इर्द गिर्द ही हैं । मगर उन्हें हम पहचान नहीं पाते । दोनों मनुष्यके रूपमें ही रहते हैं । परन्तु व्यवहार एवं सोचकी भिन्नताके कारण उन्हें देव एवं दानवका दरजा दिया जाता है । हम सभी जिन देवताओंके दर्शन करना चाहते हैं वास्तवमें वे इसी धरती पर विचरण कर रहे हैं मनुष्यके रूपमें । इनकी वाणी, इनका व्यवहार, इनकी उदारता, इनकी शांति, इनकी मिठास और विनम्रता इतनी स्वच्छ और पवित्र है कि उन्हें देखकर मन प्रफुल्लित हो उठता है । ऐसे देवताओंके चरण स्पर्श करनेकी इच्छा होती है । निश्चय ही ऐसे धीर-वीर-गंभीर एवं पवित्रताके प्रतिमूर्ति महामानवके कारण ही यह धरती बहुरत्ना वसुंधरा कहलाती है ।

हम उपरोक्त चार बन्दरको प्रतिपल ख्याल रखें । हो सके तो अपने घरके दीवार पर ऐसी तस्वीर जरूर लगवाएं जहाँ प्रतीकात्मक रूपसे चार बंदर हों । इनमें एक अंगुली कानमें हो, दूसरेकी अंगुली आंख पर हो, तीसरे की अंगुली मुंह पर हो और चौथेकी अंगुली दिमाग पर हो । ताकि हमें हमेंशा उन प्रतीकात्मक रूपको देखते ही यह प्रेरणा मिले कि **सोचो मगर बुरा मत सोचो, देखो मगर बुरा मत देखो, बोलो मगर बुरा मत बोलो और सुनो मगर बुरा मत सुनो ।** यदि ऐसा हमारे जीवनमें हो जाये तो यह जीवनकी बहुत बड़ी उपलब्धि होगी । यह बहुत बड़ा धर्म है, बहुत बड़ी सामायिक है, यह परमात्माकी पूजा है । **'द आर्ट अफ लिविंग'** जीनेकी कला यही है । इनके बगैर बाह्य धर्म सभी व्यर्थ है ।

हम यदि इन प्रतीकात्मक चार बन्दरोंकी हंमेशा रक्षा करेंगे तो यही हमारे जीवन सफल बनानेमें सहायता करेंगे ॥ प्रणाम ॥

१०८ मनकोंका आध्यात्मिक रहस्य

चंचल मनको संतुलित करनेके लिए मन्त्र जपका विशेष महत्त्व है। जप मालामें १०८ मनके होते हैं और इनके अपने अपने गूढ अर्थ हैं। १०८ यह पूर्णांक माना गया है। १+०+८ बराबर ९ इसमें १ से ९ तककी किसी भी संख्याका गुणा या जोड़ करें तो उनका योग ९ ही आएगा। १०८ मनकोंकी मालामें ९ का विशेष महत्त्व है।

योगकी मान्यताने प्रतिदिनके श्वास–प्रश्वासकी संख्या २१६०० अर्थात् मनुष्य १०८०० वार श्वास लेता है और इतने ही वार वापस छोड़ता है। यदि इसमें पीछेके दो शून्य हटा दिए जाते हैं तो १०८ की संख्या बन जाती है। इसीलिए सिद्ध एवं परमहंस सन्तके नामके आगे १०८ लगाकर सन्मानित करनेकी प्रथा थी। जैन धर्मके अनुसार णमोकार मंत्रका बहुत महत्त्व है। इसमें अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय एवं संतोंको नमस्कार किया जाता है। इसमें इनके क्रमशः १२, ८, ३६, २५ तथा २७ गुण होते हैं जिनका जोड़ १०८ होता है। बौद्ध साधनामें भी १०८ मनकोंकी मालासे जाप किया जाता है। गौतम बुद्धके जन्मके समय भी १०८ ज्योतिषी उपस्थित हुए थे। उनके निर्वाण पर भी १०८ परिक्रमा लगाई गई थी। जापानमें मृतकके लिए १०८ दीप जलानेकी परम्परा है।

सूर्यकी परिक्रमा करने वाले २७ नक्षत्र हैं और एक नक्षत्रके ४ चरण हैं। इसका मतलब २७ गुणा ४ बराबर १०८ चरण नक्षत्र चक्रमें हैं। ज्योतिष शास्त्रके अनुसार १२ राशियाँ और ९ ग्रह होते हैं जिनका गुणफल भी १०८ होता है। ऊर्जावान मंगल ग्रहका अंक ९ है। ३६० दिनका एक वर्ष होता है और एक दिन रातमें ३० मुहुर्त होते हैं अर्थात् वर्षभरमें ६० गुणा ३० बराबर १०८०० मुहुर्त हुए।

आध्यात्मिक दृष्टिसे देखें तो शिव और शक्ति अर्थात् पुरुष और नारी सृष्टिके आधार हैं। श्री राम तथा सीता शब्द भी अपनेमें गूढ़ अर्थ छिपाए हुए हैं। राममें र + आ+म में स्वर व्यंजनके अनुसार र २७ वाँ आ

दूसरा तथा म २५ वां अक्षर है, इनकी संख्या २७+२+२५ बराबर ५४ हुई जिसका भी जोड़ ९ होता है ।

इसी प्रकार सीता स+ई+त+आ ३२+४+१६+२ बराबर ५४ होते हैं । राम और सीताकी संख्या मिलाकर कुल १०८ का अंक होता है ।

कृष्ण शब्दमें स्वर और व्यञ्जनके अनुसार १०८ संख्या आ जाती है । क्(१७), ऋ(७), ष्(४७), न्(३६), अ(१), इस प्रकार १०८की संख्या पूर्ण संख्या है । इसीलिए श्री कृष्णको पूर्णब्रह्म परमात्मा कहा गया है । अतः पूर्णको पानेके लिए, अनुभव करनेके लिए पूर्ण संख्याका प्रयोग करना चाहिए । इसलिए नाम जप मालामें १०८ मनके होते हैं । १०८ मनकेकी माला फेरकर मन-मस्तिष्कको एकाग्र कर मनुष्य आध्यात्मिक उन्नति, नैतिक उत्कर्ष प्राप्त कर जीवनको उत्कृष्ट बना सकता है ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके सिद्धान्तानुरूप १०८ पक्षके प्रतीक ही १०८ मनके हैं । तो १०८ पक्ष क्या हैं इनको समझें, महामति श्री प्राणनाथजी १०८ पक्ष समझाते हुए कहते हैं,

पुष्ट मरजाद जो प्रवाह पख, याको सार बताऊं लख ।
ताके हिसे किए नौ, चढ़े सीढी भगत जल भौ ॥

अर्थात् पुष्ट प्रवाह और मर्यादा इन तीन भावोंको पक्ष कहा जाता है । नवधा भक्तिके द्वारा इन तीनोंके नौ-नौ भाग कर भक्तजन इस सीढ़ीसे भवसागरके पार हुए हैं ।

भी ताके बांटे किए सताइस, चढ़े ऊंचे सुरत बांध जगदीस ।
सो बांटे किए असी और एक, पोहोंचे वैकुंठ चढे इन विवेक ॥

वे तीनों भाव नवधा भक्तिसे गुणा करने पर सत्ताईस हो जाते हैं । इन्हींके द्वारा भक्त जन अपने चिन्तनको जगतके ईस (जगदीश) तक पहुँचाते हैं । अब पुनः सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणसे उन भावोंको गुणा करने पर एक्यासी भाव (पक्ष) होते हैं । इन सोपानों पर विवेकके साथ चढ़ कर वैकुण्ठ तक पहुँचा जाता है ।

पख बयासिमां जो कह्या, वल्लभाचारज तहाँ पोहोंचिया ।
स्यामा वल्लभी यों करी बड़ी दौर, ए भी आए रहे इन ठौर ।।

बयासीवाँ पक्ष इससे भी आगे कहा गया है, श्री वल्लभाचार्यजी (प्रेमभक्तिमार्गके कारण) वहाँ तक पहुँचे हैं । श्याम (राधा) वल्लभी भी अपने प्रयत्नोंसे यहाँ तक पहुँच पाए ।

त्रासिमा पख परवान, जो वासना पांचो लिया निरवान ।
ए पाँचो कहूं अपनाईत कर, देखाऊं सब्दातीत घर ।।

यह वही तिरासीवाँ पक्ष हैं जिसे पञ्च वासानाओंने (विष्णु भगवान, शिवजी सनकादि, शुकदेव एवं सन्त कबीर) ने ग्रहण किया है । उपरोक्त तिरासीवाँ पक्षमें निम्नलिखित पच्चीस पक्ष जोड़नेसे १०८ पक्ष पूरे हो जाते हैं,

धाम तलाव कुंज बन जोए, मानिक नेहेरें बनकी सोय ।
पश्चिम चौगान बड़ो बन कहिए, पुखराजजी यमुनाजी लहिए ।।

आठ सागर आठ जिमीके, ए पच्चीस पक्ष धाम धनीके ।।

अतः उपरोक्त १०८ पक्षके प्रतीक स्वरूप मालामें १०८ मनके परोनेकी परम्परा श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें हैं । इसके साथ-साथ जिन महापुरुषोंको इन १०८ पक्षका ज्ञान एवं यहाँतककी पहुँच हो ऐसे परमहंस महापुरुषोंके नामके आगे भी १०८ लगाकर संबोधन करनेकी परम्परा रही है ।

- शास्त्री लक्ष्मण चैतन्य

क्या व्यर्थ है : *गुण न हो तो रूप व्यर्थ है ।*
विनम्रता न हो तो विद्या व्यर्थ है ।
उपयोग न हो तो धन व्यर्थ है ।
साहस न हो तो जोश व्यर्थ है ।
भुख न हो तो भोजन व्यर्थ है ।
परोपकार न हो तो जीवन ही व्यर्थ है ।

दृष्टान्त दर्पण

सुखी कौन

एक बार पाटली पुत्रमें प्रवचनके दौरान महात्मा बुद्धसे उनके शिष्य आनन्दने पूछा, भगवन् आपके सामने हजारों लोग बैठे हैं, बताइए इनमें सबसे सुखी कौन है ? बुद्धने कहा, वह देखो-सबसे पीछे जो दुबला-फटेहाल आदमी बैठा है वही सबसे सुखी है । इस उत्तरसे आनन्द संतुष्ट नही हुआ । उसने कहा, यह कैसे हो सकता है ? बुद्ध बोले, अभी बताता हूँ । आसनसे उठकर सामने बैठे लोगोंके पास गये और बारी बारीसे सभीको पूछा । तुम्हें क्या चाहिए ?

उनमेंसे किसीने धन मांगा तो किसीने मकान, किसीने पत्नी तो किसीने पुत्र, किसीने निरोग, किसीने जमीन जायदाद, किसीने शत्रुक्षय तो किसीने कुछ इस तरह सभीने अपनी अपनी चाह बताई । कोई भी ऐसा आदमी नही निकला जिसने कुछ नही मांगा हो । बुद्ध वहाँसे दूर बैठा उस फटेहालके पास गये और पूछा, कहो भाई तुम्हें कुछ चाहिए ? उस आदमीने कहा, कुछ भी नहीं भगवन् मुझे कुछ नही चाहिए । बुद्धने कहा अरे भाई, सभीने कुछ न कुछ मांगा तो तुम भी मांगो । उसने विनम्रतापूर्वक कहा भगवन् यदि आप देना ही चाहते हैं तो इतना ही दिजिए कि 'मेरे अन्दर कुछ मांगनेकी चाह ही पैदा न हो यह वरदान दिजिए ।'

तब बुद्धने आनन्दसे कहा, आनन्द- जहाँ चाह है, वहाँ सुख कदापि नही हो सकता ।

चाह गई चिन्ता मिटी मनुवा वेपरवाह ।
जिसको कछु न चाहिए वह शाहनका शाह ।।

भिक्षाका उपयोग

समर्थ स्वामी रामदासजीका यह नियम था कि वे स्नान

एवं पूजनसे निवृत्त हो केवल पाँच घरमें भिक्षाटन करते थे । जो कुछ मिले वही लेकर लौट जाते ।

एक बार उन्होंने एक घरमें द्वारपर खड़े होकर 'भिक्षां देही' का घोष किया । गृहस्वामिनी जिसकी थोड़ी ही देरपूर्व अपने पतिसे कुछ कहा सुनी हुई थी और गुस्सेमें थी, बाहर आयी और चिल्लाकर बोली, अरे भिखमंगे-तुमलोगोको भिख मांगनेके अलावा दूसरा कोई काम नही है । मुफ्त मिल जाता है इसीलिए चले आते । चलते बनो यहाँसे, मैं तुम्हें कुछ नही देनेवाली । जाओ कोई दूसरा घर ढूढ़ो ।

स्वामीजी हँसकर बोले, माताजी, मैं खाली हाथ किसी द्वारसे वापस नही जाया करता । कुछ-न-कुछ तो लूँगा ही । वह गृहस्वामिनी भोजनोपरान्त चौका लीप रही थी और उसके हाथमें लीपनेका कपड़ा था । वह उसे उनकी झोलीमें डालते हुए बोली, तो ले यह कपड़ा और कर अपना मुँह काला यहाँसे ।

स्वामीजी प्रसन्न हो वहाँसे निकले और नदी पहुँचे । उन्होंने उस कपड़ेको साफ किया और उसकी बत्तियाँ बनायी तथा वे एक देवालय पहुँचे । इधर जब वे वह कपड़ा धो रहे थे, तो उधर उस स्त्रीका हृदय भी पसीजने लगा और उसे पश्चात्ताप होने लगा कि उसने व्यर्थ ही एक सत्पुरुषका निरादर किया । उसे इतना रंज हुआ कि वह विक्षिप्त हो उन्हें खोजनेके लिये दौड़ पड़ी । अन्तमें वह उस देवालयमें आ पहुँची । वह स्वामीजीके चरणोंमें गिर पड़ी और बोली, देव ! मैंने आप-सरीखे धर्मात्माका निरादर किया । मुझे क्षमा करें और उसके नेत्रोंसे अश्रुधारा बह निकली ।

रामदासजी बोले देवि ! तुमने उचित ही भिक्षा दी थी । तुम्हारी भिक्षाका प्रतापसे ही यह देवालय प्रकाशित हो उठा है, अन्यथा तुम्हारा दिया हुआ भोजन तो जल्द ही खत्म हो गया होता । परमात्मा जो करते हैं अच्छा ही करते हैं ।

संकलन : योगेन्द्र उप्रेती, श्री ५ नवतनपुरी धाम

साहित्य सेवा

चन्द्रगढी : श्री तारा खतिवडाको नूतन गृह प्रवेश मार्गशीर्ष १० गतेको शुभ मुहूर्तमा भएको हुनाले साहित्य सेवामां रू. ५०/ भेट प्रदान गर्नु भएको छ। शुभकामना ।

भद्रपुर (झापा) : श्री गोपाल खनालज्यूले नूतन गृह प्रवेशको खुशीमा साहित्य सेवामां रू. ५०/ भेट प्रदान गर्नुभएको छ। शुभकामना ।

बिर्तामोड (झापा) : श्री चेतन एवं हिमा खतीवडा का सुपुत्र श्री अर्जुन खतिवडाको जन्म दिनको उपलक्ष्यमा साहित्य सेवामा रू. १००/ भेट प्राप्त भएको छ। जन्मदिनको शुभकामना ।

श्री रामकुमार खनाल द्वारा साहित्य सेवामा रु.१०० प्राप्त भएको छ। धन्यवाद ।

भद्रपुर (झापा) : श्री राजश्यामाजी को असीम कृपाले गर्दा श्री रामकुमार खनालज्यूले नूतन गृह प्रवेश भएको खुसीमा साहित्य सेवामा रू. १००/ भेट प्रदान गर्नु भएको छ।

बिर्तामोड (झापा) : श्रीचन्द्रप्रकाश नेउपानेकी सुपुत्री सुश्री हीमा नेउपानेको श्री तारानिधि भट्टराईको सुपुत्र श्री अर्जुन भट्टराईको साथ ता. ०२/१२/ २००९ मा शुभ विवाह भएको उपलक्ष्यमा साहित्य सेवामा रु.१५१/– प्राप्त भएको छ। वधाई ।

असम : धा.वा हीराबाई घिमिरेको नाममा श्री ५ नवतनपुरी धाममा थाल भोग तथा गोटा पारायण गरी सा. सेवामा रू. २००/ प्राप्त भएको छ।

बनीयानी (झापा) : श्री बलराम मिश्रका परिवारले माता पिताको पावन स्मृतिमा श्री तारतम सागरको अखंड पारायण तथा भजन कीर्तनको आयोजन गर्नुभयो। धा.वा आत्माको सुख शान्तिको कामना गर्दै साहित्य सेवामा रु.१०० प्रदान गर्नुभएको छ।

सिक्किम : धा. वा. पुष्पा शर्माको पुण्य तिथिमा श्री ५ नवतनपुरी धाममा रसोई सेवा गरी साहित्य सेवामा पनि रू. १००/ सेवा प्राप्त भएको छ।

बनीयानी (झापा) : श्री मती इन्द्राबाई खगेश्वर खनालद्वारा आत्मा शान्तिको लागी गोटापारायण राखेको खुशीमा साहित्य सेवामां रू. १००/ भेट प्राप्त भएको छ।

सबैमा श्री ५ नवतनपुरी धामको असीम कृपा भई रहोस यही प्रार्थना ।

जनवरी महीनेकी रसोई सेवा

०१) श्री परेशभाई कोराट — राजकोट
०२) श्री मनुभाई धूलाभाई पटेल — आमोदरा
०३) धा.वा. खोडाभाई भगवानभाई सावलीया — अलीयावाडा
०४) धा.वा. लक्ष्मीबेन पोपटभाई पटोडीया — जामनगर
०५) श्रीमती राजेश्वरीबेन धर्मेशभाई व्यास — हिम्मतनगर(वर्तमान-अमेरिका)
तथा श्रीमती नन्दाबेन दिनेशभाई पटेलपुराल (वर्तमान-अमेरिका)
०६) श्री रविकुमार बचुभाई कपुपरा — राजकोट
०७) श्रीमती भारतीबेन मुकेशभाई पटेल — नडीयाद
०८) धा.वा. वसरामभाई पूंजाभाई पादरीया तथा
धा.वा. मणिबेन वसरामभाई पादरीया — राजकोट
०९) श्री कमलेशभाई रणछोडभाई चोवटीया — तरसींगडा(वर्तमान-वडोदरा)
१०) श्री शैलेषकुमार रणछोडभाई चोवटीया (मुंगरा) — जूनागढ
११) श्री मनसुखभाई छगनभाई सावलीया — जामनगर
१२) श्री उदयकुमार रणछोडभाई चोवटीया — तरसींगडा(वर्तमान-अमेरिका)
१३) श्री मनोजभाई प्रेमजीभाई कथीरिया — जामनगर
१४) धा.वा. उगरीबेन करशनभाई पटेल — साकरोडीया
१५) श्रीमती जयाबेन पुरुषोत्तमभाई मालविया — धावा(गीर)
१६) श्री रोशन भंडारी — दार्जीलिंग
१७) श्री शान्तिभाई अर्जुनभाई पटेल (पिपलिया) — जामनगर
१८) श्री अमीचंदभाई रामाभाई पटेल — पुराल
१९) श्री दीप प्लास्टिक — जूनागढ
२०) श्री नीतिनचंद्र मूलचंदभाई जोबनपुत्रा — मुंबई
२१) श्री मोहनलाल कुंवरजी शाह — सिनुग्रा (कच्छ)
२२) श्री रामजीभाई टपुभाई पणसारा(हरिपुरवाला) — जामनगर
२३) श्री सहारा कन्ट्रक्शन कंपनी — राजकोट
२४) श्री चिन्तनकुमार ईश्वरभाई पटेल — निकोडा
२५) धा.वा. पुजारीश्री खीकाप्रसादजी — श्री ५ नवतनपुरी धाम,जामनगर
२६) श्री मणिलाल बाबाभाई पटेल — साहेबापुर(हाल. अमेरिका)

श्री ५ नवतनपुरी धाम द्वारा हरिपुर गाँवमें आयोजित नेत्र निदान यज्ञके दृश्य

श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर, उपलेटा (राजकोट) में आयोजित
पूजा पधरावनी, कलश अनावरण एवं सत्संगके दृश्य

श्री ५ नवतनपुरी धाममें आयोजित पत्रकार संमेलनके दृश्य

RNI No. GUJ BIL /2006/18311 Registration No. GJN-1 / 2009-2011

हैदराबादमें आयोजित 'चतुर्थ हिन्दू धर्माचार्य सभा'
को सम्बोधन करते हुए परम पू.आचार्य महाराजश्री

स्वतन्त्रता दिवस पर श्री प्रणामी हाईस्कूलमें आयोजित विविधकार्यक्रमोंकी झलक

गौशालामें गायोंको चारा देते हुए परम पू.आचार्य महाराजश्री

PRINTED BOOK

TO :

SHRI KRISHNA PRANAMI DHARMA PATRIKA

SHRI 5 NAVTANPURI DHAM JAMNAGAR - 361 001 (INDIA)